गोदना - मधुबनी का एक खास अन्दाज़

ब्लैज़ जोसेफ

मैं किताबों, कैलेंडरों, पोस्टरों में मधुबनी शैली के चित्र देखता आया हूँ। इसके बारे में थोड़ा-बहुत जाना भी है। एक दिन सोचा क्यों न इसे और ज़्यादा जानने, सीखने के लिए मधुबनी ही जाया जाए। इस तरह मैं पहुँचा जिटवारपुरा। बिहार के मधुबनी ज़िले में यह दलितों की एक छोटी-सी बस्ती है। कोई 60-70 घर होंगे इसमें। इसकी खासियत यह है कि इसकी किसी भी गली में चले जाओ आपको घर-आँगन में बैठी महिलाएँ-लड़कियाँ गोदना बनाती दिख जाएँगी। अरे, वो गोदना नहीं जो हाथ-पाँव में होता है। यह चित्र बनाने की एक शैली है। जो मधुबनी से थोड़ी अलग है। मुझे भी इस गाँव में आने के बाद ही इसके बारे में पता चला।

गोदना और मधुबनी

गोदना और मधुबनी की शैली और विषय दोनों में काफी फर्क हैं। मधुबनी में केवल धार्मिक कथाओं को दिखाया जाता है। और ज़्यादातर इसे ब्राह्मण और कायस्थ समुदाय की महिलाएँ ही बनाती हैं। मधुबनी के बारे में हम चकमक के किसी और अंक में बात करेंगे। इस बार गोदना की ही बात करते हैं!

मेरे एक दोस्त ने मुझे चानो देवी और उनके पति रोदी पासवान से मिलवाया। गोदना को चित्रकला की एक शैली के रूप में ढालने का पूरा श्रेय इन्हीं दोनों को जाता है। आज उनके पूरे गाँव में गोदना चित्रकला ही होती है। मैंने तय किया कि मैं इन्हीं के घर रहकर गोदना के बारे में जानूँगा और सीखूँगा।

1963 में बिहार भयंकर अकाल की चपेट में था। उस वक्त मधुबनी ज़िले के कई लोगों ने कागज़ पर मधुबनी शैली के चित्र बनाने शुरू किए। इस काम से कुछ कमाई भी होने लगी थी। पहले लोग दीवारों और फर्श पर ही इस शैली की चित्रकारी करते थे। वह भी सिर्फ धार्मिक पर्वों पर। ज़्यादातर ऊँची जातियों की महिलाएँ ही इस शैली के चित्र बनाती थीं। दलित महिलाएँ इन चित्रों की केवल नकल किया करती थीं। रामायण जैसे धार्मिक ग्रंथ पढ़ने की मनाही होने के कारण उनको उन चित्रों की विषयवस्तु के बारे में ज़्यादा पता भी न था।

यहाँ की दलित महिलाएँ नथिनी समुदाय से ताल्लुक रखती

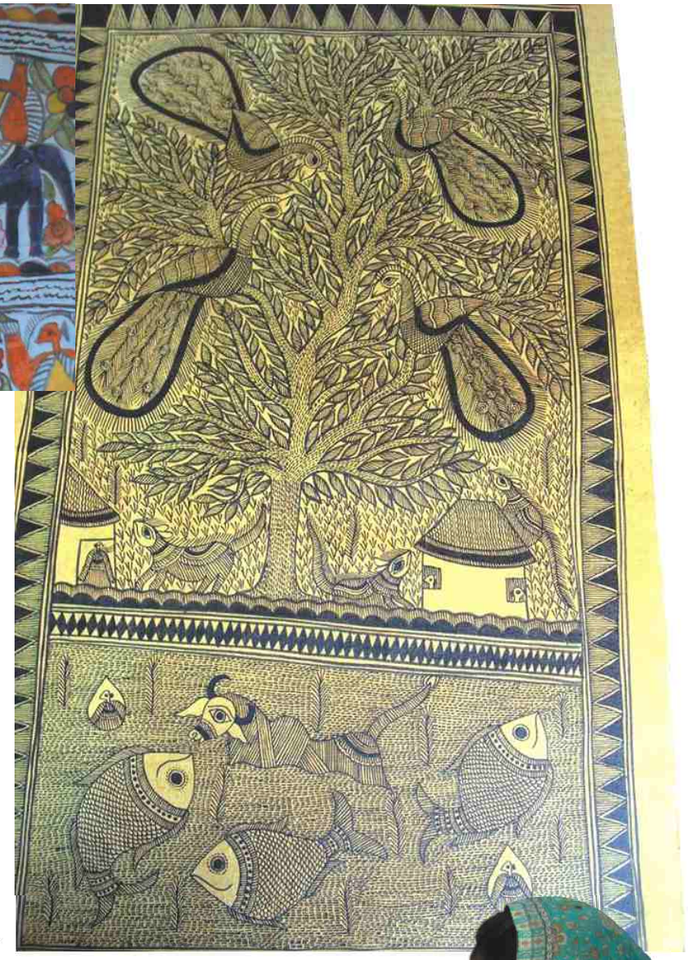

हैं। वह समुदाय सालों से शरीर पर गोदना बनाने का काम करता आया है। इनके गोदने बहुत खास शैली के हुआ करते हैं। एक जर्मन महिला - एरिका - ने इस शैली को बड़े पैमाने पर पनपने में बड़ी मदद की।

गोदने के चित्रों की शैली और उनकी विषयवस्तु मधुबनी से काफी अलग थी। चानो देवी को लगा कि क्यों न वो अपने समुदाय के नायकों की कहानियों को कागज़ पर उतारे। इस तरह पासवान समाज के नायक शैलेश्वर राजा की कहानियाँ भी गोदना शैली में कागज़ पर आने लगीं। कई महिलाओं ने इसमें दिलचस्पी दिखाई और समय के साथ इसमें बदलाव भी किए।

मेरे सुबह उठने से पहले ही महिलाएँ चित्र बनाना शुरू कर चुकी होती थीं। चित्र बनाने के बीच-बीच में घर के काम भी होते रहते। चानो देवी कोई चित्र बनाती और मुझे उसकी नकल करने को कहतीं। वे खासतौर पर फूलों, पत्तों, फलों, पेड़ों की छालों से रंग बनातीं। बबूल की गोंद और को मिलाकर भी रंग बनाया

सभी फोटोः सुमित एडविन

हल्दी को मिलाकर भी रंग बनाया जाता। कागज़ पर सबसे पहले गोबर के पतले घोल का लेप किया जाता है। इससे कागज़ रंग को कम सोखता है। केवल काला रंग ही रासायनिक होता था।

गोदना बनाने से पहले किनार या बॉर्डर बनाया जाता है। फिर चित्र का विस्तार होता है। वह बनते-बनते पूरा होता जाता है। यह देखना एक अद्‌भुत अनुभव होता है। रंग भरने से पहले चित्र का खाका नहीं बनाया जाता है। चित्र में नई-नई छवियाँ जुड़ती जाती हैं। किसी कहानी की तरह। कुल मिलाकर कागज़ में जो नज़र आता है उसमें दिलकश सममिति उभरती दिखाई देती है। चित्र की सभी चीज़ों का ढाँचा बनाने के बाद उसमें रंग भरा जाता है। ज़्यादातर हल्का हरा, हल्का नारंगी, हल्का लाल, बैंगनी और नीले रंग का इस्तेमाल होता है। शायद बबूल की गोंद की कमी होना वजह हो या बड़ी मात्रा में प्राकृतिक रंग बनाना मुश्किल होता होगा, आजकल ज़्यादातर लोग रासायनिक रंगों का उपयोग करने लगे हैं।

गोदना चित्रों में बहुत सारी लकीरें होती हैं। यही वजह है कि गोदना के समूचे चित्र में मधुबनी शैली की झलक भी मिलती रहती है और यह अलग भी नज़र आता है।

पिछले दस सालों में गोदना चित्रकला बहुत समृद्ध हुई है। हर चित्रकार ने इसमें अपनी कल्पना और अनुभव से नए आयाम जोड़े हैं। आज कई लोगों ने गोदना में अपनी खास पहचान बना ली है। आज इस क्षेत्र की अधिकाँश लड़कियाँ स्कूल जा रही हैं। गोदना भी बनाती हैं। उत्तम पासवान, श्रवण पासवान और उनकी माँ गोदना के अद्‌भुत कलाकार हैं। गोदना चित्रकला को दुनिया के सामने लाने वाली चानो देवी को 2007 में उनके योगदान के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार मिला। उनकी बेटी राजकुमारी को टोकियो (जापान) के मिथिला संग्रहालय को डिज़ाईन करने के लिए आमंत्रित किया गया है। 9 फरवरी 2010 को चानो देवी का निधन हो गया। जिटवारपुर में उनके साथ बिताए दिन मुझे हमेशा याद रहेंगे।

आज गोदना के कद्रदानों की कमी नहीं है। फिर भी मुझे लगता है कि मधुबनी के साए से निकलने में इसे वक्त लगेगा। क्या इसकी एक वजह मधुबनी का उच्च जातियों से जुड़ाव है?

2010 अन्तर्राष्ट्रीय जैवविविधता वर्ष

1. खुशबूदार किस्में

वैसे तो चावल की कई खुशबूदार किस्मे हैं। इनमें से सबसे जानी -पहचानी है बासमती। आमतौर पर पुलाव, बिरयानी में यही चावल इस्तेमाल किया जाता है। यह नाम शायद वासुमती (धरती की गँध) से बना है। महाराष्ट्र में अम्बेमोहर नाम का खुशबूदार चावल इस्तेमाल होता है। पकने पर इसमें आम के फूलों जैसी खुशबू आती है। छत्तीसगढ़ के खुशबूदार चावल का नाम है विष्णु भोग।

फोटो: जैकब नलियानम

छत्तीसगढ़ के विष्णु भोग चावल का खेत